GYANBODH
An International Multidisciplinary Peer Reviewed Journal

ISSN:3048-9792
Volume: 3
Issue: 2
March - April: 2026

भारतीय ज्ञान परम्परा में योग–दर्शन

आरती देवी

MA 4th Sem, Roll No.MA YOGA 25003

जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय चित्रकूट, उत्तर प्रदेश

जितेन्द्र प्रताप सिंह

सहायक आचार्य, योग विभाग, जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय

चित्रकूट, उत्तर प्रदेश

शोध–सारांश

योग भारतीय ज्ञान परम्परा का अभिन्न अंग रहा है। भारतीय ज्ञान परम्परा में अध्यात्म से लेकर दर्शन तक योग की उपस्थिति और ख्याति दोनों देखी जा सकती है। वैदिक काल से लेकर अब तक भरतीय–ज्ञानधारा की सतत–प्रवाहिता कल्लोलिनी में योग की उज्ज्वलता दृष्टिगोचर होती है। जहां वेदों में वर्णित अनुष्ठानों में प्राणायाम से लेकर तप तक की विधियों में योग–तत्वों की उपस्थिति दृष्टिगोचर होती है, वहीं गीता कर्मयोग जैसी विस्तृत अवधारणा पर योग–तत्वों का दार्शनिक विवेचन करती हैं। अतः वेदों उपनिषदों से शुरू हुई यह योग–यात्रा पुराणों और महाभारत से होते हुए आधुनिक काल तक सतत प्रवाहित होती चली आ रही है। योगियों ने योग को मिलन की संज्ञा से अभिहित किया। योग को आत्मा का परमात्मा से मिलन बताया। वहीं अध्यात्म–ग्रंथो में योग एवं योग की महिमा का पर्याप्त बखान प्राप्त होता है। ध्यान–योग का महत्व प्राचीन काल से ही भारतीय–परम्परा में समाहित है। उपनिषदों के अनुसार ईश्वर समस्त भूतों का सृजनकर्ता एवं अधिपति है। वह मनुष्यों के हृदय में निवास करता है। ईश्वर जैसा है उसका उस रूप में सर्वत्र दर्शन करना ही शास्वत–आनन्द है और यह क्रिया ध्यान और आत्म–शुद्धि के द्वारा घटित होती है। भगवद्गीता में भगवान श्री कृष्ण ने कर्मयोग, भक्तियोग, ज्ञानयोग, निष्काम कर्मयोग आदि के द्वारा योगी की विशेषताओं का वर्णन करते हुए योग से घटित फलों का विवेचन किया है। गीता में योग के स्वरूप का विशद वर्णन प्राप्त होता है। न्याय, वैशेषिक, सांख्य आदि दर्शनों में भी योग–दर्शन की झलक प्राप्त होती है। योग लौकिक एवं पारलौकिक दोनों प्रकार की उन्नति एवं सर्वविधि कल्याण

GYANBODH
An International Multidisciplinary Peer Reviewed Journal
ISSN:3048-9792
Volume: 3
Issue: 2
March - April: 2026

की उपादेयता सिद्ध करने वाली विशद पृष्ठभूमि है। भारतीय ज्ञान परम्परा की पुनीत धारा में योग का स्वरूप अविच्छिन्न एवं उज्ज्वल दृष्टिगोचर होता है। भारतीय ज्ञान परम्परा के सभी शीर्ष–ग्रंथो में योग के महत्व का प्रतिपादन और परिभाषीकरण तथा उसके तत्त्वों की विवेचनाएँ भारतीय ज्ञान परम्परा में योग–दर्शन के महत्व का भी प्रतिपादन करती हुई दृष्टिगोचर होती हैं।

प्रस्तावना

योग–दर्शन मूलतः पातंजल–योग सूत्रों पर आधारित है। योग वस्तुतः भारतीय ज्ञान परम्परा में विकसित वह सुव्यवस्थित और वैज्ञानिक साधना–पद्धति है जिसका मूल उद्देश्य मनुष्य और मनुष्यता के मार्ग में बाधक–तत्वों की निवृत्ति है। योग केवल शारीरिक स्वास्थ्य के लिए ही नहीं न ही मात्र मन और बुद्धि की स्वस्थता के लिए है, यह जीवन–दर्शन है। योग जीवन को क्लेश–मुक्त करने की प्रायोगिक–प्रणाली है, जो ऋषि–मनीषा द्वारा अनुभवजन्य एवं सिद्ध है। ऐसा हम इसलिए कह सकते हैं क्योंकि योग के मानव शरीर पर पड़ रहे प्रभावों और चिकित्सा–पद्धति में उसकी उपयोगिता के अध्ययन के सबन्ध में अब नए शोध सामने आ रहे हैं, किंतु योग का लक्ष्य मनोदैहिक स्वास्थ्य तक ही सीमित नहीं है न रहा है अपितु योग का उद्देश्य क्लेशों की निवृत्ति और चित्त का शोधन करते हुए ध्यान द्वारा समाधि को प्राप्त कर स्व–स्वरूप दर्शन और ईश्वरप्राप्ति का है। योगश्चचित्तवृत्तिनिरोधः[1] द्वारा योग अपने केंद्रीय–सिद्धान्त का प्रतिपादन करता है। चित्त की वृत्तियां ही मनुष्य के अनुभव जगत का निर्माण करने में सहायक होती हैं। विचार, कल्पना, स्मृति, द्वेष, राग ये सभी चित्त की वृत्तियां हैं। इन चित्त की वृत्तियों का निरोध किस तरह सम्भव है? इसका उत्तर योगसूत्र में देते हुए महर्षि पतंजलि कहते हैं कि अभ्यास और वैराग्य द्वारा चित्त की वृत्तियों का निरोध सम्भव है। इन वृत्तियों का निरोध इस लिए आवश्यक है क्योंकि कई जन्मों के संस्कार के कारण ये वृत्तियां मनुष्य को भोग की ओर आकर्षित करती हैं। योगसूत्र के अंतर्गत मन की पाँच वृत्तियों का उल्लेख प्राप्त होता है, जो प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति के रूप में वर्णित हैं–

[1] पातञ्जल योगदर्शन,1.2

GYANBODH
An International Multidisciplinary Peer Reviewed Journal
ISSN:3048-9792
Volume: 3
Issue: 2
March - April: 2026

प्रमाणविपर्ययविकल्पनिद्रास्मृतयः ।[2]

पा०यो०सू०–1.6

इन वृत्तियों से ही पंचक्लेष का मार्ग प्रशस्त होता है और ये पंचक्लेश अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश के रूप में वर्णित हैं–

अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशः क्लेशः।।[3]

क्रियायोग इन्ही क्लेशों की निवृत्ति कर चित्त को इन्द्रिय ज्ञान,विषय ज्ञान से रहित कर योगी को मानव–जीवन के परम उद्देश्य की प्राप्ति तक का मार्ग दिखाता है। योग की अवधारणा में अष्टाङ्ग योग के क्रमशः स्वरूप में अंतिम आयाम के रूप में समाधि का वर्णन आया है। समाधि ध्यान द्वारा सिद्ध होती है, गहन ध्यान की अवस्था ही समाधि है। समाधि ही साधक को स्व–स्वरूप को जानने और ब्रह्मांडीय ऊर्जा से परिचय कराती है। समाधि के महत्व के विषय में योग चूड़ामणि उपनिषद में वर्णन आया है कि बारह प्राणायाम से एक प्रत्याहार, बारह प्रत्याहारों से एक धारणा, बारह धारणाओं से एक ध्यान और बारह ध्यान से एक समाधि घटित होती है–

प्राणायाम द्विषटकेन प्रत्याहारः प्रकीर्तिः।
प्रत्याहार द्विषटकेन जायते धारणा शुभा।।
धारणा द्वादश प्रोक्कं ध्यानं योग विशारदे।
ध्यान द्वादशकेनैव समाधिभिरधीयते।।[4]

योग चूडामणि उपनिषद 111.113

योग वैदिक काल से भारतीय जीवन–शैली का एक महत्वपूर्ण अंग रहा है। वैदिक साहित्य धार्मिक अनुष्ठानों एवं कथाओं का प्रमुख स्रोत रहा है। हम आज भी धार्मिक–अनुष्ठानों की अगर भीति में जाकर देखें तो इस अनुष्ठेय धर्म में तीन तत्वों की समावेशिता दृष्टिगोचर होती

[2] पातञ्जल योगदर्शन,1.6
[3] पातञ्जल योगदर्शन,2.3
[4] योग चूडामणि उपनिषद 111.113

ISSN:3048-9792
Volume: 3
Issue: 2
March - April: 2026

है जो क्रमशः यज्ञ, दान और तप के रूप में हैं, क्योंकि ये तीनों चित्त को शुद्धता प्रदान करने वाली क्रियाएँ हैं। इसका उल्लेख श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्री कृष्ण भी करते हैं–

यज्ञदानतपः कर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत्।

यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम्।।[5] गीता 18.5

यज्ञ, दान, तप में तप की भूमिका ही योग है। बिना योग के कोई भी अनुष्ठान अपनी परिणिति को प्राप्त नहीं कर सकता है। इस हेतु वैदिक काल से ही योग की महत्ता का प्रतिपादन होता आज तक चला आ रहा है। वैदिक साहित्य, पुराण–साहित्य से लेकर महाभारत, रामायण आदि सभी प्रमुख ग्रंथों में योग की परिचर्चा प्राप्त होती है, जिससे भारतीय ज्ञान परम्परा में योग–विद्या का महत्व परिलक्षित होता है। भारतीय–दर्शनों में योग अत्यंत प्रभावशाली एवं व्यापक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। विभिन्न ग्रंथों में इसलिए योग से संबंधित परिचर्चा एवं योग की परिभाषाएँ प्राप्त होती हैं। श्रीमद्भगवद्गीता में योग की अत्यंत गूढ़ दार्शनिक व्याख्या प्राप्त होती है। गीता के अंतर्गत समत्व भावना और कर्म–कौशल को भी योग की संज्ञा प्रदान की गई है–

समत्वं योग उच्यते।[6]

गीता 2.48

योगः कर्मसु कौशलम्।[7]

गीता2.50

वेदों के अंतर्गत जो योग तप, ध्यान, उपासना इत्यादि के रूप में दृष्टिगोचर होता है वही उपनिषदों में और अधिक स्पष्टता के साथ सामने आता है। कठोपनिषद में वर्णन आता है कि पंच इंद्रियों मन एवं बुद्धि की स्थिर अवस्था को योग कहते हैं और इस अवस्था की प्राप्ति होने पर मनुष्य सम्पूर्ण रीति से दोष रहित हो जाता है–

तां योगमिति मन्यंते स्थिरामिन्द्रिय धारणाम्।

---

[5] गीता 18.5

[6]गीता 2.48

[7] गीता 2.50

ISSN:3048-9792
Volume: 3
Issue: 2
March - April: 2026

अप्रमत्तस्तदा भवति योगो हि प्रभवाप्ययौ।।[8] कठोपनिषद् 2.3.11

शिवसंहिता जीवात्मा और परमात्मा के संयोग को योग के रूप में पारिभाषित करती है–

संयोगो योग इत्युक्तो जीवात्म परमात्मनोः।।[9]

शिवसंहिता 1.43

गीता कहती है कि जो दुख रूपी संसार के संयोग से वियोग कराता है, जिसका नाम योग है। उसका अभ्यास खेदरहित मन से तत्परता से निश्चय पूर्वक करना चाहिए–

तं विद्याद् दुरूखसंयोगवियोगं योगसंज्ञितम्।
स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽर्निविण्णचेतसा।।[10]

गीता 6.23

वैदिक काल से लेकर अब तक प्रवाहित भारतीय–ज्ञान धारा के लगभग प्रत्येक चिंतन और ग्रंथ में योग तत्व की उपस्थिति मिलती है, जो कि यह दर्शाता है कि योग प्रारंभ से ही भारतीय अध्यात्म परम्परा और चिंतन का प्रमुख अंग रहा है। पतञ्जलि ने जिस योग दर्शन को सूत्रबद्ध किया वह वास्तव में सांख्य तत्व–मीमांसा का सुव्यवस्थित रूप है।[11] इस तरह प्रत्येक काल एवं स्वरूप में भारतीय ज्ञान परम्परा में योग की उपस्थिति दृष्टिगोचर होती है, जो यह सिद्ध करती है कि भारतीय ज्ञान परम्परा में योग की भूमिका एक अंग के रूप में है। अध्यात्म से लेकर नित्य–क्रियायों के प्रत्येक चरण में जागने से लेकर शयन तक की व्यवस्था में योग का महत्व प्रतिपादित होता दृष्टिगोचर होता है। योग एक प्रायोगिक पृष्ठभूमि है और यह पृष्ठभूमि इस प्रकार की है कि इसकी उपयोगिता प्रत्येक रूप में अनिवार्य है। इसलिए प्रमुख ग्रंथों एवं भारतीय आर्ष–मनीषा से लेकर अर्वाचीन मनीषि–परम्परा ने योग की महत्वाकांक्षा को समझा और उसके विस्तृत प्रायोगिक दर्शन को अपने विवेचनाओं और टीकाओं

[8] कठोपनिषद् 2.3.11

[9] शिवसंहिता 1.43

[10] गीता 6.23

[11] क्रियायोग स्वामी सत्यानंद सरस्वती

GYANBODH
An International Multidisciplinary Peer Reviewed Journal
ISSN:3048-9792
Volume: 3
Issue: 2
March - April: 2026

द्वारा उत्कर्ष प्रदान कर जन–जन के मध्य पहुचाया। योग–विद्या की यह प्रसिद्धि नई नहीं है योग प्राचीन काल से ही भारतीय–ज्ञान परम्परा का प्रमुख अंग रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1–पातंजल योगसूत्र, नंदलाल दशोरा, प्रकाशक–रणधीर प्रकाशन हरिद्वार, संस्करण–1997, सूत्र–संख्या–1.2

2–पातंजल योगसूत्र, नंदलाल दशोरा, प्रकाशक–रणधीर प्रकाशन हरिद्वार, संस्करण–1997, सूत्र–संख्या –1.6

3–पातंजल योगसूत्र, नंदलाल दशोरा, प्रकाशक–रणधीर प्रकाशन हरिद्वार, संस्करण–1997, सूत्र–संख्या –2.3

4–योग चूड़ामणि उपनिषद 111.113

5–श्रीमद्भागवतगीता गीताप्रेस गोरखपुर–18.5

6–श्रीमद्भागवतगीता गीताप्रेस गोरखपुर–2.48

7–श्रीमद्भागवतगीता गीताप्रेस गोरखपुर–2.50

8–कठोपनिषद–2.3.11

9–शिवसंहिता 1.43

10–श्रीमद्भागवतगीता गीताप्रेस गोरखपुर–6.23

11–स्वामी सत्यानंद सरस्वती, क्रियात्मक योग, प्रकाशक–योग पब्लिकेशन्स् ट्रस्ट, मुंगेर बिहार संस्करण–2024–पृष्ठ संख्या–24